शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जनवरी 2022
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

स्वतंत्रता पूर्व एवं स्वातंत्र्योत्तर राजनीतिक परिस्थितियाँ और नुक्कड़ नाटक

शिवकुमार वर्मा (शोधार्थी)
राजकीय कला महाविद्यालय
कोटा, राजस्थान, भारत

शोध संक्षेप

नाटक काव्य का एक भेद है। इसमें दृश्य और श्रव्य का समावेश होता है। यह विधा लोक चेतना से अधिक सम्बद्ध है। नाट्यशास्त्र पर आचार्य भारत मुनि का लिखा प्राचीन ग्रन्थ मिलता है। संस्कृत में नाटकों की सुदीर्घ परंपरा है। हिंदी साहित्य में नाट्य विधा का अविर्भाव गद्य लेखन से प्रारम्भ हुआ। हिंदी में नाटकों का आरम्भ भारतेंदु हरिश्चंद्र से माना जाता है। तत्कालीन परिस्थितियों को नाटकों के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया। नुक्कड़ नाटक रंगमंचीय नाटकों से भिन्न है। इन नाटकों को किसी गली, चौराहे, किसी संस्थान के दरवाजे के सामने खेला जाता है। इनमें जनसामान्य से जुड़ी समस्याओं को अभिव्यक्त किया जाता है। भारतेंदु युग से लेकर आज तक नुक्कड़ नाटक लोगों में लोकप्रिय हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में स्वतंत्रता पूर्व और स्वातंत्र्योत्तर राजनीतिक परिस्थितियाँ और नुक्कड़ नाटक पर विचार किया गया है।

राजनीतिक परिस्थितियाँ

किसी भी देश के लोगों के जन-जीवन को प्रभावित करने में वहाँ की राजनीतिक परिस्थितियाँ सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती हैं अर्थात् राजनीति उस राष्ट्र के विकास में केन्द्रीय भूमिका निभाती है। राजनीतिक विचारधारा वहाँ के जन-जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करती है।

ब्रिटिश शासन के समय स्वतंत्रता से पूर्व भारतीय जनजीवन का आधार आधुनिक भौतिकवादी नहीं था, जितन 1947 की आजादी के उपरांत। जब तक हम परतंत्र थे हमारा एक मात्र ध्येय था स्वतंत्र होना। स्वतंत्र होने की छटपटाहट में तत्कालीन सत्ता के विरुद्ध जनसामान्य के द्वारा विभिन्न आंदोलन किए गए यथा - गांधीजी का सत्याग्रह, दाण्डी यात्रा, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, चरखा क्रांति आदि जो नुक्कड़ नाटकीय विचारधारा ही थी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने विभिन्न नाटकों के माध्यम से ब्रिटिश शासन के विरुद्ध मोर्चा खोला। यद्यपि उनके नाटकों में प्रहसन की मात्रा थी तथापि उनका मुख्य ध्येय तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों से जनता को रूबरू कराते हुए बदलाव की महत्वाकांक्षा थी।

"भारतेन्दु और भारतेन्दुयुगीन अन्य रचनाकारों ने जनता की इच्छा, आकांक्षाओं असंतोषों उत्पीड़नों को अभिव्यक्त किया। ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध आवाज उठाते हुए वह भारत दुर्दशा नाटक की शुरुआत में ही लिखते हैं

रोबहु सब मिलिकै, आवहु भारत भाई।
हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।
अब जहँ देखहु तहँ दुःखहि दुःख दिखाई।
हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।"[1]

भारतेन्दु अपने साहित्य (भारत-दुर्दशा, अंधेर नगरी आदि) के माध्यम से ब्रिटिश शासन में अपने देश अपने लोगों की स्थिति को देखकर

दुःखी हैं। साथ ही उन्होंने देशवासियों को आर्यावर्त भारत की श्रेष्ठता से अवगत कराया, जिसका ब्रिटिश शासन में हनन हो रहा था।

भारतेन्दु ने सामयिक यथार्थ बोध को लेकर जिन सामाजिक नाटकों यथा - मातृभूमि प्रेम, स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार, गोरक्षा, बाल विवाह-निषेध, शिक्षा-प्रसार का महत्व, मद्य-निषेध कन्या हत्या की निंदा आदि की रचना की वे निश्चय ही पाश्चात्य नाटककार ब्रेख्त के सन्निकट है, जिनमें सामाजिक बदलाव की ताकत निहित हैं।

"जनपक्षीय नाट्य परम्परा की विरासत के रूप में 'भारत दुर्दशा' नाटक की प्रस्तुती हो सकती है।"[2]

नुक्कड़ नाटक पूर्णतः जन पक्षधर होते हैं और विषयवस्तु की दृष्टि से भारत दुर्दशा भी जनपक्षीय श्रेणी में आता है।

अंग्रेजों की शोषण नीति का भारतेन्दु द्वारा प्रत्यक्ष उल्लेख इस भावना की चरम परिणति है :

भीतर-भीतर सब रस चूसै हँसी-हँसी के तन-मन-धन मूसै
जाहिर बातन में अति तेज, क्यों सखि सज्जन ! नहिं अंगरेज।"[3]

बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने 'हार्दिक हर्षादर्श' कविता में ब्रिटिश सत्ता की स्वार्थपूर्ण शासन प्रक्रिया के लिए ईस्ट इंडिया कंपनी को दोषी ठहराया है। शासनाधिकार लेने वाली रानी विक्टोरिया के विषय में तो उन्होंने यहां तक अपना मत व्यक्त कर दिया है :

"किय सनाथ भोली भारत की प्रजा अनाथन"

सामायिक उपादानों को लेकर अन्य विभिन्न नाटककारों यथा बालकृष्ण भट्ट कृत नयी रोशनी का विष, खड़गबहादुर मल्ल कृत 'भारत आरत'(1885), अंबिका दत्त व्यास कृत 'भारत सौभाग्य' (1887), राधाकृष्ण दास कृत 'दुखीनी बाला' (1880), गोपालराम गहमरी कृत 'देश-दशा' (1892) जीवनानंद शर्मा कृत 'भारत विजय', कृष्णा नन्द जोशी कृत 'उन्नति कहां से होगी' आदि नाटक देश की तत्कालीन दुर्दशा का चित्र बताते हैं और समाज की समस्याओं को प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से उनके मूल में काम करने वाली बुराइयों को दूर करने के लिए प्रेरित करते हैं।

प्रेमचन्द के साहित्य में भी तत्कालीन समाज-देश की दुर्व्यवस्था वर्ण्य विषय है। उन्होंने ब्रिटिश शासन और उसकी छात्रछाया में पनप रही जमींदारी-साहूकारी व्यवस्था पर कटाक्ष करते हुए आदर्शोन्मुख समाज की परिकल्पना की। उनकी सत्ता बदलाव की राजनीतिक विचारधारा के कारण ही ब्रिटिश सरकार द्वारा उनका साहित्य जप्त कर लिया गया।

अंग्रेजी हुकूमत की भर्त्सना करते हुए शिवराम अपने नाटक 'अभी लड़ाई जारी है' में लिखते हैं -

थी अंग्रेजों की हुकूमत राजाओं के राज।
प्रजा गुलामी दोहरी, ढोती दो दो ताज ।।[4]

ब्रिटिश शासन में न केवल नगरों की स्थिति खराब थी वरन गांवों की स्थिति तो बद से बदतर कही जा सकती है। एक तरफ जहां ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन था तो दूसरी तरफ सेठ, साहूकार और जमीदारों द्वारा ग्रामीण जनता का खून चूसा जा रहा था। उनसे लगातार परिश्रम कराने के बदले उचित मेहनताना न देकर या कुछ अग्रिम राशि देकर उन्हें बंधुआ मजदूर बनाने की परम्परा थी। लोग अपने पूर्वजों की जमीन को छोड़ने के लिए मजबूर थे यथा - "तू कहती है, यह गाँव छोड़ दें हम। सात पुस्तों से रह रहे हैं हम इस गावँ में। इसी गांव में हमारे पुरखे पैदा हुए और मर गए। इसी गाँव में मैं पेदा हुआ और इसी गाँव की गलियों में खेलते कूदते बड़ा हुआ। इस गाँव की हर चीज पेड़

रास्ते, कुआं, नदी खेत खलिहान सब अपने से लगते है। ...तू इस गांव को छोड़ने को कहती है।"[5]

स्वाधीनता से कुछ वर्ष पूर्व औपनिवेशीकरण साम्राज्यवाद और फासीवाद के विरोध में 25 मई 1943 ईस्वी को रंगकर्मियों द्वारा भारतीय जन नाट्य संघ की कोलकाता में स्थापना की गई, जिसे असम एवं पश्चिम बंगाल में भारतीय गण नाट्य संघ और आंध्रप्रदेश में प्रजा नाट्य मण्डली के नाम से जाना गया। वर्तमान में इसकी देशभर में लगभग 600 ईकाइयां सक्रिय हैं। इप्टा ने नाट्य आन्दोलन से जन आंदोलन का लक्ष्य निर्धारित कर लिया था। शील के 'किसान' एवं दूसरे नाटकों का पृथ्वीराज कपूर ने देशभर में प्रदर्शन किया।

"स्वातंत्र्योत्तर भारत में जनता को अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति विशेष सतर्कता आने लगी, तो वहीं दूसरी ओर स्वतंत्रता संग्राम में सुझाए गए सुख और ऐश्वर्य की प्राप्ति की उत्कण्ठा भी बढ़ने लगी।"[6]

परिणामतः चारों तरफ शोषण का वातावरण बनने लगा। यद्यपि मानव जीवन के बदलते इस यथार्थ को विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में साहित्य की हर एक विधा में अपने-अपने ढंग से अभिव्यक्त किया जा रहा था तथापि जन सामान्य के मध्य खेले जाने वाले नुक्कड़ नाटकों में अपने समय की विषम परिस्थितियों से जनित नवीन जीवन-मूल्यों की जीवन्त अभिव्यक्ति अन्य साहित्यिक विधाओं से प्रखर रूप में प्रकट हुई।

अतः नुक्कड़ नाटककारों ने तत्कालीन परिस्थितियों को आत्मसात करते हुए अपने नाटकों की रचना की।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् नेताओं ने अनेक गुट बनाए और अपने-अपने स्वार्थ की पूर्ति में तल्लीन हो गए। इन्होंने अपनी स्वार्थ पूर्ति हेतु राजनीति का सहारा लिया ताकि स्वयं सरकार में बैठकर देश की सत्ता को बंधक बना सकें।

'चौदह दिन की हवालात' नुक्कड़ नाटक में लेखक इसी राजनीतिक परिस्थिति को व्यक्त करते हुए लिखते हैं -

"ठीक इसी तरह,,, जैसे सरकार चल पा रही हो या न चल पा रही हो, पर उसे चलाने की परम्परा तो पूरी होती ही रहनी चाहिए, कभी निबंधन के द्वारा, कभी गठबंधन के द्वारा। बंधक रहेगा, तो बंधक बनी रहेगी सरकार... और जब बंधक बनी रहेगी तो प्रशासनिक प्रबंध से मुक्त रहेगी। जान बची तो लाखों पाए।"[7]

देश के स्वतंत्र होने के पश्चात् भारतीय संविधान लागू हुआ जिसमें सभी के लिए रोटी, कपड़ा और मकान की बुनियादी आवश्यकता के साथ न्याय, स्वतंत्रता समानता, रोजगार देने की बात कही गई. परन्तु यह बातें सिर्फ बातें ही रहीं। न्याय प्रक्रिया इतनी धीमी रही कि असमानता की खाई में कोई विशेष अंतर नहीं आया। गरीबी और अमीरी के मध्य एक ऐसी खाई विकसित हो गई जो कभी न पाटी जा सकी। 'चौदह दिन की हवालात' नुक्कड़ नाटक में लेखक बेकार व्यक्ति की व्यथा को व्यक्त करते हुए लिखते हैं "आज तीसरा दिन है सरदारी भाई। कोई ग्राहक ही नहीं आ रहा है काम कराने वाला। सुबह से दोपहर तक यहाँ 'मिनिस्पल चौक' में बैठकर वापस चले जाते हैं। हाथ खाली हैं। ऐसे कैसे चलेगी जिंदगी।"[8]

देश के नेताओं ने भारत को प्रगतिशील सम्पन्न स्वावलम्बी बनाने का वायदा किया। कानून भी बनाए और समयानुकूल उनमें संशोधन भी हुए। देश को आर्थिक रूप से सुदृढ़ बनाने के लिए पंचवर्षीय योजनाएं भी बनाई गई और लागू की

गईं। प्रत्येक भारतीय को उसके जीवन में हर क्षेत्र में संपन्न व समृद्धि के नएनए मार्ग तलाशने की बात कही गई, लेकिन समय बीतने के साथ-साथ जब जन मानस के सपने पूर्ण नहीं हो रहे थे तो सरकार से जनता का मोहभंग होना लाजिमी था।

इसी मोह भंग ने साहित्यकारों की एक श्रेणी विकसित की, जिसे प्रगतिवाद या मार्क्सवाद कहा जाने लगा, जिसके निर्माण एवं विकास में नागार्जुन, मुक्तिबोध, धूमिल, दुष्यंत निराला, यशपाल, रामविलास शर्मा, शिवदान सिंह चौहान आदि की महत्वपूर्ण सृजनात्मक भूमिका रही। शिवराम आख्यान की उसी दूसरी परम्परा के संघर्षशील सृजनधर्मी थे। जहाँ परतंत्र भारत में आम जन को दिखाए गए सपने और स्वतंत्र भारत में उनकी वास्तविकता पर दुष्यंत कुमार लिखते हैं :

"कहाँ तो तय था चरागाँ हर एक घर के लिए।
कहाँ चराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।।

शिवराम भी अपने नाटकों में इस बात का पुरजोर समर्थन करते है कि सरकार सिर्फ जनता की बात करने और सत्ता को अपनी बंधक बनाने मे ही कारगार रही। 'घुसपैठिये' नाटक में वह लिखते हैं :

"अपने-अपने ढोल है अपने-अपने राग।
कॉव- कॉव केवल करें, कारे-कारे काग।।
बातें जनता की करें काम करें कछु और।
हमको कोई और ना, इनको कोई ठौर ।।[9]

शिवराम आगे भी लिखते हैं कि अंग्रेजों के शासन के पश्चात् स्वतंत्र भारत में आम जन की समस्याएं और नौकरशाही का रुतबा बढ़ता गया। पुलिसियातंत्र आम आदमी की आवाज सुनने की बजाय उसकी आवाज को दबाने में मशगूल रहा। महंगाई दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी, बेरोजगारों की तादाद बढी, गुण्डागर्दी बढ़ी। वह व्यंग्य करते हैं कि अगर वास्तव में विकास हुआ तो अफसर शाही का यथा-

"हर चुनाव के बाद यहाँ, सुरसा की तरह महंगाई बढ़ी।
बेरोजगारी खूब बढ़ी और गुण्डागर्दी खूब बढ़ी।।
अफसरशाही का ठाठ-बाट, पहले से और हुआ ऊंचा।
पुलिस के डण्डे से थर-थर, कंपायमान कूचा-कूचा।।"[10]

स्वतंत्रता के बाद आम आदमी को बुनियादी आवश्यकताओं की वस्तुएं भी आसानी से नहीं मिल पा रही थी। बैंक, बीमा, सड़क, तहसील, एवं राशन की आदि बुनियादी सुविधाओं के नाम पर सरकारी कार्यालयों में भ्रष्टाचार अपनी चरम सीमा पर पहुंच गया।

'सरकार का निजीकरण' नुक्कड़ नाटक के माध्यम से लेखक तात्कालीन व्यवस्था पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं, "बिजली, पानी, सड़क, बैंक, बीमा, व्यवसाय राशन तथा शिक्षा - व्यवसाय ये सब ऐसे क्षेत्र है, जिनका जनता से सीधा वास्ता रहता है। इन्हीं में करप्शन हद से ज्यादा बढ़ गया है। बड़े पैमाने पर चोरी और कामचोरी हो रही है। सरकार शिक्षा का भी निजीकरण करने की बात सोच रही है।[11]

सन् 1942 से पूर्व जो राजनेता स्वयं को त्याग एवं श्रद्धा की प्रतिमूर्ति साबित कर रहे थे वे स्वाधीन भारत में अपने मूल सिद्धांतों को त्यागकर अपने कल्याण में लीन हो गए। सन् 1952 में देश के प्रथम आम चुनाव में कांग्रेस पार्टी की जीत हुई और पं. जवाहरलाल नेहरू ने विदेश नीति के तहत पंचशील के सिद्धांत का प्रतिपादन करते हुए 'हिंदी-चीनी भाई-भाई' का नारा देकर चीन से दोस्ताना संबंध स्थापित किए

परंतु सन् 1962- ई. में चीन ने भारत पर आक्रमण कर दिया, जो भारतीय राजनीति के लिए एक गहरा झटका था। इसके परिणामस्वरूप सम्पूर्ण भारत में संशय, शंका व निराशा के बादल छा गए।

पाकिस्तान ने भी कबाइलों की मदद से भारत के स्वर्ग कश्मीर पर आक्रमण कर दिया जिसका भारत ने मुंह तोड़ जवाब दिया। इसी क्रम मे 1965 ई. में पाकिस्तान ने पुनः भारत भर आक्रमण किया। तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने 'जय-जवान जय किसान' का नारा देकर भारतीय जनता में ऊर्जा का संचार किया। साथ ही रूस ने मध्यस्थ की भूमिका निभाते हुए भारत और पाकिस्तान के मध्य ताशकन्द समझौता करवाया। शास्त्री जी की अचानक मृत्यु होने से देश में राजनीतिक अराजकता फैल गई। दिन-प्रतिदिन महंगाई की मार जनता पर पड़ने लगी तो दूसरी तरफ सरकारी विभागों में भ्रष्टाचार एवं रिश्वत का बोलबाला हो गया। कोई भी सरकारी विभाग क्यों न हो अगर आम व्यक्ति को कोई अपना काम करवाना होता था तो उसे सरकारी कर्मचारी को रिश्वत भी देनी पड़ती थीं। जैसा कि 'रेलवे प्लेटफार्म' नुक्कड़ नाटक में लेखक ने इसी स्थिति को उजागर किया है, "बात ना बना रिया हूँ खाँ साब जी। टेसन का प्लेटफारम तो कमीसन का प्लेटफारम हो गया है अब! अधिकारी को कमीसन दो, ठेकेदार को कमीसन दो। किसी एक को देना हो तो बताऊँ। बच्चों का पेट पालना मुस्किल हो रिया है अब।"[12]

इसी प्रकार शिवराम भी अपने नाटक 'घुसपैठिए' में भ्रष्टाचार पात्र के माध्यम से युगीन परिस्थिति और भ्रष्टाचार में लिप्त व्यक्ति की निम्न कोटि की मानसिकता के समक्ष देश का महत्व नगण्य है यथा -

भ्रष्टाचार: अर्ज किया है-
दरख्वास्त का वजन हूँ,
फाइल की चाल हूँ
गल जाए हर जगह जो,
मैं ऐसी दाल हूँ।
ईमान और ज़मीर सरेआम बेच दें
इंसानियत को कोडियों के दाम बेच दे
मुझ में लिप्त आदमी सोचे न विचारे
मतलब के लिए देश को दस बार बेच दे"[13]

1971 ईस्वी में पाकिस्तान ने भारत पर फिर से आक्रमण किया। युद्ध का परिणाम यह हुआ कि आम व्यक्ति को टैक्स के भार से लाद दिया गया। अनेक सरकारी तंत्र निरंकुशता के पोषक बन गए। अधिकारी भ्रष्टाचार के दलदल में धंसते चले गए। बेरोजगारी के साथ-साथ महगाई ने आम आदमी की कमर तोड़ दी।

"अबे उल्लू की दुम... मँहगाई इतनी बढ़ गई है कि लोगों को चूल्हा जलाना मुश्किल हो रहा है। दाल-भाजी के चक्कर से मुक्ति मिले तो रंगाई पुताई को सोचे।"[14]

इस तरह की तत्कालीन परिस्थितियों से आहत होकर जयप्रकाश नारायण ने देश में 'सम्पूर्ण क्रांति' का बिगुल बजाया। वह कारगार सिद्ध हुआ परंतु सरकार ने इस क्रान्ति के आहवान को कठोरता से कुचल दिया। 1971 ईस्वी के आम चुनाव में श्रीमती इन्दिरा गाँधी पर धांधली करने के गम्भीर आक्षेप लगे। 2 जून 1975 ईस्वी को इलाहबाद उच्च न्यायालय के न्यायधीश श्री जगमोहन लाल ने श्रीमती इंदिरा गाँधी के चुनाव को अवैध करार दे दिया। उनके खिलाफ निरंतर जनाक्रोश फैलने लगा। स्थिति को गम्भीर होते

देख 25 जून 1975 को देश में आपातकाल की घोषणा कर दी गई।

आपातकाल श्रीमती गांधी की निरंकुशता का परिचायक था। श्रीमती गांधी जी का विरोध करने वाले राजनीतिक नेताओं पर अत्याचार किए गए। उन्हें जेल में डाल दिया गया। आम व्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित कर दिया गया। आपातकाल के दौरान जब प्रेस एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर अंकुश लगा दिया गया तो आम जन, विभिन्न बुद्धिजीवियों एवं सरकार की नीतियों के विपक्षियों के सानिध्य में विभिन्न नुक्कड़ नाटकों के माध्यम अपने अवसाद उदगार को व्यक्त करने लगा।

इसी समय शिवराम का नुक्कड़ नाटक 'जनता पागल हो गई है' काफी प्रसिद्ध रहा, जो आपातकाल से पूर्व सव्यसाची द्वारा 1974 में 'उत्तरार्द्ध के नवें अंक में प्रकाशित हुआ। डॉ हेतु भारद्वाज 'जनता पागल हो गई है' के फ्लैप पर लिखते है, "आपातकाल से पूर्व ही इसके प्रदर्शन नुक्कड़ों चौपालों पर देश भर में बड़ी संख्या में होने लगे थे।"[15]

नाटक की विषयवस्तु के आधार पर आपातकाल के दौरान अनेक जगहों पर सरकार द्वारा इसके प्रदर्शन को प्रतिबंधित कर दिया गया।

"ओ मेरी सरकार, मेरी अन्नदाता माई बाप
पाँच बरसों में दिखाई दी नहीं इक बार आप
खेत सूखे, पेट भूखे गॉव है बीमार
हम लोगों की मेहनत कोठे भरता जमीदार
कोई सुनता नहीं हमारी, क्या बोले सरकार
एक आसरा सिर्फ आपका, आए हम दरबार" [16]

प्रत्युत्तर में सरकार पुलिसिया तंत्र से संवाद करती है और जिस जनता ने उसे चुन कर सत्ता दी है उसी जनता को पहचानने से इंकार करती है -

सरकार : ऐ पुलिस!
ये कौन है और क्या हमें समझाय है
इसके तो इक इक रोम से अपने को बदबू आय है
उफ मेरे नाजुक बदन को देखता है घूरकर
थाम ले मीसा में इसको और नजर से दूर कर[17]

इस प्रकार स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय राजनीतिक परिस्थितियों में अनेक मोड़ आए। परतंत्र भारत में जो त्याग की भावना भारतीय नेताओं में थी स्वतंत्रता के बाद वही भावना सत्ता लोलुपता एवं स्वार्थपरता में बदल गई।

नुक्कड़ नाटक इन्हीं परिस्थितियों की उपज है, जिसने सरकार के विरुद्ध जनता को जागरूक करने का प्रयास किया। इन नुक्कड़ नाटको ने सोई हुई जनता को हिलाकर रख दिया तथा उसमें जाग्रति का संचार हुआ। जब चोर बने 'कोतवाल' 'गिरगिट', 'औरत', जनता पागल हो गई है, फिरंगी लौट आये, फरमान, कुर्सी, मोर्चे की पोल, 'हमे बोलने दो' आदि नुक्कड़ नाटकों में तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति पूर्ण रूप से प्रतिबिम्बित हुई है।

पूंजीवादी व्यवस्था के प्रतिरोध में नुक्कड़ नाटकों की महत्वपूर्ण भूमिका है। जब निजीकरण की होड़-सी लग गई तो पूँजीवादी व्यवस्था का जन्म हुआ। स्वतंत्रता के बाद से पूंजीवाद ने इस तरह अपना अस्तित्व बनाया कि यह निरतंर फलता-फूलता। रहा वर्तमान में यह अपने चरमोत्कर्ष पर है। हर तरफ निजीकरण और पूंजीवादी व्यवस्था है। सरकारी तंत्र जनता का तंत्र ना रहकर चंद पूंजीपतियों को पल्लवित करने का तंत्र बन गया है। शिवराम घुसपैठिये नाटक की भूमिका में लिखते हैं, "इस दौर में देश में पुनः नव उपनिवेशीकरण की चुनौतियों से जूझ रहा है। समस्त श्रमजीवी वर्ग पर भयावह आक्रमण चल

रहा है, उद्योग धन्धे, कृषि बर्बाद हो रहे हैं। मध्यवर्ग के भी वही हिस्से थोड़ी छद्म राहत महसूस कर रहे हैं जो अवसर अनुकूल 'ढलने' में कामयाब हो गए हैं, या फिर वे जिन्होंने भ्रष्टाचार, घपले-घोटाले और टैक्स चोरी करके काले धन के जखीरे बना लिए है। हमारा शासक वर्ग पूंजीवादी विकास के रास्ते पर चलते हुए साम्राज्यवादियों के चंगुल में फंसने की अपरिहार्य स्थिति में पहुंच गया है"[18]

नुक्कड़ नाटककारों और प्रगतिवादी साहित्यकारों ने पूंजीवादी व्यवस्था को नव उपनिवेशवाद की संज्ञा दी अर्थात जिस तरह व्यापार करने के उद्देश्य से अंग्रेज भारत मे आये और शनै-शनै इस देश को अपना उपनिवेश बना लिया और जनता को गुलाम। ठीक पूंजीवादी व्यवस्था भी इसी तरह सम्पूर्ण देश को अपने आगोश में समेट लेगी आम जनता तो दुर सरकार भी चाहकर इससे बाहर नहीं निकल पायेगी। जैसा कि शिवराम 'अभी लड़ाई जारी है' नाटक में बहुराष्ट्रीय कंपनी - पात्र के माध्यम से बताते हैं कि पूंजीवाद अपनी पकड़ कहाँ तक बना सकता है -

"मैं बहुराष्ट्रीय विदेशी कम्पनी, सारी दुनिया में अपना डंका। सारी पृथ्वी पर मेरा कारोबार। उद्योग कहीं, कहीं पर व्यापार। दुनिया भर की सरकारें सब की सब मेरी कृपा निहारे। जब भी चाहूँ, जिसको चाहूँ, राजा से रंक बना डालूँ। सारी दुनिया का अर्थतंत्र मेरी मुट्ठी में रहे बंद।[19] आगे भी वह लिखते हैं कि किस तरह पूंजीवाद को बढ़ावा देने के लिए विश्व बैंक, बहुराष्ट्रीय कम्पनियां ,अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की मिलीभगत है-

"में विश्व बैंक। सारी दुनिया से लेनदेन। मैं ऋणदाता। वे कर्जदार। चुंगल में मेरे सारा संसार अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष मेरा भाई। बहुराष्ट्रीय कंपनियों मेरी बहनें। रूप कई पर सार एक।"[20]

पूंजीवाद का वर्चस्व न सिर्फ भारत बल्कि सम्पूर्ण विश्व में है। अंतर्राष्ट्रीय मानविकी, आर्थिक संगठनों में उसकी घुसपैठ है। अपने उद्देश्य पूर्ति के लिए इनका उपयोग करता है। है। पूंजीवाद इतना बढ़ गया है कि उसने धर्म की व्याख्या ही बदल दी। शिवराम 'जनता पागल हो गई है' नाटक में लिखते हैं कि मिल मालिक पूंजीपति जनता (मजदूर) से दिन रात काम करवाते है, जब लगातार परिश्रम से थकावट और भूख से जनता व्याकुल होती है तो पूंजीपति धर्म की व्याख्या करते हुए कहता है सहनशील बनो, संतोष करो, भगवान से डरो, तुम दुःखी दरिद्र हो तो पूर्व जन्म के पापों के कारण, कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचनः। अर्थात् काम किए जा फल और भूख की चिंता मत करा। पूंजीपति हमेशा जनता का शोषण करता है और करता रहेगा-

पूंजीपति : पीड़ा होती है जनता ? 'तो पीड़ा सहने का अभ्यास करो। इसी में सद्गति है। सारे धर्मों का यही सार है जनता - सहनशील बनो। संतोष करो। परिश्रमी बनो। भगवान से डरो ! भाग्य पर भरोसा रखो । तुम्हारे इस जन्म के दुःख-सुख पूर्वजन्मों के कर्मों का फल है। इस जन्म में अच्छे कर्म करो, अपने कर्तव्य का पालन करो। अगले जन्म में इसके सुफल तुम्हे प्राप्त होंगे। धर्म प्राण बनो जनता। इसी में कल्याण है ... भगवान श्री कृष्ण ने गीता में कहा है- कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचनः। काम किए जा .... फल की इच्छा मत कर...काम किए जा...फल की इच्छा मतकर।"[21]

इस तरह जनता के लगातार अथक परिश्रम से कारखाने में ऊत्पाद की मात्रा बढ़ती है, पूंजीपति

की पूंजी में इजाफा होता है, परंतु मजदूर लगातार मजबूर बनता जाता है। पूंजीवादी व्यवस्था शोषक और शोषित, अमीर-गरीब को बढ़ावा देती है।

निष्कर्ष

पूंजीवादी व्यवस्था के प्रतिरोध में अनेक नुक्कड़ नाटक यथा- 'अभी लडाई जारी है', 'जनता पागल हो गई है', 'गिरगिट', 'पेपर वेट मशीन', 'औरत हत्यारे' आदि थोड़े बहुत संशोधनों के साथ बहुत खेले गए और खेले जा रहे हैं। सरकारी नीतियों के प्रचार-प्रसार में भी कुछ वर्षों से नुक्कड़ नाटकों का उपयोग किया जा रहा है। सरकार की जन कल्याणकारी योजनाओं, पर्यावरण संरक्षण के प्रति लोगों में जागरूकता, जल, वायु, ध्वनि प्रदूषण के कारण एवं बचाव आदि के प्रचार-प्रसार में भी सरकार द्वारा आजकल नुक्कड़ नाटक किए जा रहे हैं। सरकार द्वरा विभिन्न गैर सरकारी संगठनों को निविदा आदि के माध्यम से अपनी नीतियों के प्रसार प्रचार के लिए नुक्कड़ नाटक करने के ठेके दिए जा रहे हैं। जो नाटक सरकार की जनविरोधी नीतियों और निरंकुशता पर प्रतिबद्ध लगाने के लिए विकसित हुआ वही आज सरकार की नीतियों व जनकल्याणकारी योजनाओं के प्रसार का साधन बन गया।

संक्षेप में कह सकते हैं कि सरकार की विभिन जनकल्याणकारी योजनाओं आयुष्मान भारत, भारत गोल्डन काडर्, सड़क सुरक्षा, जलशक्ति अभियान, प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि, कृषि मान धन योजना, मातृत्व वंदना योजना, जननी सुरक्षा योजना, कन्यादान योजना, शादी सगुन योजना, 108 निःशुल्क एम्बुलेंस सेवा आदि के प्रचार-प्रसार में कुछ छिट-पुट नाटक मण्डलियां / गैर सरकारी संगठन कार्य कर रहे हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 भारत-दुर्दशा संपादक : डॉ रामकली सराफ हिंदी विभाग, काशी हिंदू विश्व विद्यालय वाराणसी प्रकाशक- विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

2 भारत दुर्दशा संपादक डॉ रामकली सराफ(भूमिका)

3 हिंदी साहित्य का इतिहास सं. डॉ नगेन्द्र डॉ. हरदयाल, पृष्ठ 441

जीवानंद शर्माकृत 'भारत विजय' (1906) कृष्णानंद जोशी कृत 'जन्नति कहां से होगी' (1915)

4 घुसपैठिये (नाटक संग्रह) शिवराम, अभी लड़ाई जारी है, पृष्ठ 15

5 वही, पृष्ठ सं 14,15

6 डॉ. दशरथ ओझा, आज की हिंदी नाटक : प्रगति और प्रभाव, पृष्ठ 142

7 डा. गिरिजाशरण अग्रवाल, ग्यारह नुक्कड़ नाटक चौदह दिन की हवालात, पृष्ठ 39

8 वही, चौदह दिन की हवालात, पृष्ठ 31

9 घुसपैठिये शिवराम नुक्कड़ नाटक (संग्रह) अभी लडाई जारी है, पृष्ठ 21

10 वही, पृष्ठ 21

11 डॉ. गिरिजाशरण अग्रवाल, ग्यारह नुक्कड़ नाटक चौदह दिन की हवालात, पृष्ठ 39

12 डॉ गिरिजाशरण अग्रवाल, ग्यारह नुक्कड़ नाटक रेलवे स्टेशन, पृष्ठ 118

13 घुसपैठिये शिवराम (नाटक संग्रह), पृष्ठ 46

14 डॉ. गिरिजाशरण अग्रवाल ग्यारह नुक्कड़ नाटक रेलवे स्टेशन, पृष्ठ 119

15 जनता पागल हो गई है, शिवराम (फ्लेप पर लिखित टिप्पणी)

16 जनता पागल हो गई है, शिवराम, पृष्ठ 13

17 वही, पृष्ठ 13

18 घुसपैठिये शिवराम (भूमिका से)

19 घुसपैठिये शिवराम अभी लड़ाई जारी है, पृष्ठ 23

20 वही, पृष्ठ 23

21 जनता पागल हो गई है !, शिवराम, पृष्ठ 23